वर्ष – 7 फरवरी, 2020 बसंत पञ्चमी, सं. 2076 वि. ISSN 2349-1426

तत्त्व-सिन्धु

कुमारस्वामी फाउण्डेशन
लखनऊ

रामायण का सत्य और महाभारत का धर्म

अम्बिकादत्त शर्मा

कोई भी महाकाव्य किसी संस्कृति और सभ्यता का एक वाङ्मय-विग्रह होता है। इसका ऐतिहासिक महत्त्व बहुत बड़े फलक पर जीवनानुभव का अवलोकन और अवगाहन करने में निहित है। यह अवगाहन बाह्य-दर्शक की भूमिका में न किया जाकर अंतरंग चित्तभूमि पर किया जाता है। इसी के चलते महाकाव्यों में इतिहास को सन्दर्भित करने वाले एक कथानक के माध्यम से सांस्कृतिक जीवन के अन्तर्विरोधों, अन्तर्द्वन्द्वों, जटिलताओं और इतिहास की प्रयोजनमूलकता का आदर्शोन्मुख समाधान उस संस्कृति की विश्वदृष्टि के सम्पूर्ण परिप्रेक्ष्य में ही सम्भव हो पाता है। अतः महाकाव्यों में एक आदर्शोन्मुखी जीवन-दृष्टि निरपवाद रूप से रूपायित तो होती है, लेकिन उनकी आदर्श-चेतना एक जैसी हो, यह आवश्यक नहीं। यहाँ तक कि एक ही सांस्कृतिक परम्परा के दो या दो से अधिक महाकाव्यों की आदर्श-चेतना में गहरे भेद के लक्षण देखे जा सकते हैं। इस भेद का कारण महाकाव्यों के प्रस्थान विन्दु का भिन्न-भिन्न होना है। वस्तुतः इसी भिन्नता में महाकाव्यों की निजी विशिष्टता निहित होती है। यह प्रस्थान-भेद तत्तद् महाकाव्यों के कथानक, इतिहास-बोध और रचना-काल से निर्धारित नहीं होता, बल्कि उस आधारभूत मूल्यबोध से निर्धारित होता है जिसे नींव का पत्थर बनाकर महाकाव्यों में मूल्यव्यवस्था का एक प्रासाद, एक वाङ्मय-विग्रह तैयार किया जाता है। महाकाव्यों के नायकों के जीवन-चरित अथवा उनकी भूमिका के द्वारा जिस मूल्य या आदर्श को प्रतिष्ठापित किया जाता है, उसी से प्रस्थान-भेद को पहचानना सम्भव हो पाता है।

I

भारतीय परम्परा में रामायण और महाभारत वाल्मीकि और वेदव्यास रचित दो ऐसे महाकाव्य हैं जिनके माध्यम से दो युगों की आर्ष-संस्कृति अपनी सोलहों कलाओं के साथ वाग्-विग्रहित हुई है। बाणविद्ध क्रौंच-मिथुन के शोक से निःसृत रामायण के चौबीस हजार श्लोक मानो "सप्तभिर्युक्तं तंत्रीलयसमन्वितम्" हैं।[1] महाभारत के विषय में स्वयं वेदव्यास ने